Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education

Vol. VII, Issue No. XIII, January-2014, ISSN 2230-7540

REVIEW ARTICLE

भारत में कृषि मूल्य और भू-राजस्व

AN INTERNATIONALLY INDEXED PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL

www.ignited.in

Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. VII, Issue No. XIII, January-2014, ISSN 2230-7540

भारत में कृषि मूल्य और भू-राजस्व

Dr. Shriphal Meena*

Lecturer, Department of History, Govt. College Karauli, Rajasthan

सार – ***भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारतीय कृषि प्रणाली 9000 ईसा पूर्व के रूप में शुरू हुई। इस अवधि के दौरान कृषि और गेहूं में उत्पादन के व्यवस्थित तरीके के लिए तकनीकों का विकास किया गया, जौ और बेर ऐसी लोकप्रिय फसलें थीं जिन्हें उपमहाद्वीप में 9000 ईसा पूर्व में पालतू बनाया गया था। कृषि क्षेत्र देश की अर्थव्यवस्था की उत्पादकता और स्थिरता में बहुत योगदान दे रहा है, जिसके कारण यह माना गया है कि कृषि समृद्धि राष्ट्रीय समृद्धि के लिए मौलिक है। यह भारत के सकल घरेलू उत्पाद का लगभग 18% हिस्सा है, जो उसके कामकाजी आबादी के 58 प्रतिशत लोगों को रोजगार प्रदान करता है और ग्रामीण परिवार कृषि पर अपनी आजीविका के मुख्य साधन के रूप में निर्भर हैं।***

----------X----------

परिचय

कृषि, मत्स्य पालन और वानिकी के साथ, सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के लिए सबसे बड़ा यो गदान कर्ताओं में से एक है।[2] नई तकनीकों को नवपाषाण काल में विकसित किया गया था, जिसमें कृषि प्रणाली की विधि में सुधार करना, पंक्तियों में फसल लगाना, कपास की कताई। अन्नभंडार में अनाज। और उन्होंने अगली पीढ़ी के लिए कृषि उत्पादन की अपनी बेहतर तकनीकों को पारित किया। ज्ञान का यह परिवर्तन भारत में कृषि के आगे विकास का आधार था।[3] इस तरह के अध्ययन से उत्पन्न होने वाले उपयोगी पौधों के वितरण पर उत्पत्ति और ऐतिहासिक, गैरपर्यावरणीय सीमाओं की मान्यता आज कई व्यावहारिक अनुप्रयोग हैं। इसलिए, प्राचीन काल में भारतीय कृषि प्रणाली का अध्ययन करना उचित है।

सिंधु घाटी सभ्यता में कृषि प्रणाली

सिंधु घाटी सभ्यता हल सहित पूर्व हड़प्पा संस्कृति की काफी प्रौद्योगिकी उपलब्धियों पर निर्भर करती थी। सिंधु घाटी के किसानों ने मटर, तिल और खजूर उगाए। सिंधु घाटी सभ्यता में भी चावल की खेती की जाती थी। कृषि की पद्धति जो सिंधु सभ्यता के लोगों ने प्रचलित थी, वर्षा की कटाई थी। खोज के कारण यह प्रकाश में आया कि सिंधु सभ्यता के लोगों के पास शुष्क मौसम के दौरान शहर की जरूरतों को पूरा करने के लिए बड़े पैमाने पर जलाशय हैं। सिंधु घाटी अर्थव्यवस्था के लिए मुख्य आधार मिश्रित खेती थी। सिंधु घाटी सभ्यता में लगभग 4500BC द्वारा सिंचाई विकसित की गई थी। सिंचाई में इस नवाचार के परिणाम स्वरूप, सिंधु सभ्यता का आकार और समृद्धि बढ़ी। सिंधु घाटी सभ्यता द्वारा परिष्कृत सिंचाई और जलभंडारण प्रणालियों को विकसित किया गया था, जिसमें गिरनार में कृत्रिम जलाशय 3000 ईसा पूर्व और 2600 ईसा पूर्व में एक प्रारंभिक नहर सिंचाई प्रणाली शामिल थी।

वैदिक काल में कृषि

अनाज, सब्जियों और फलों की एक विस्तृत श्रृंखला की खेती आम थी, और पशुपालन उनकी आजीविका के लिए महत्वपूर्ण साधन था। ऐसी मान्यता थी कि जो किसान प्रकृति के निकट हैं, उन्हें असाधारण रूप् से भगवान के करीब होना चाहिए। बीजों के महत्व पर जोर दिया गया और फसल के एक निश्चित क्रम की सिफारिश की गई और इस दौरान सिंचाई के लिए गाय के गोबर से खाद तैयार करने की प्रथा आम थी।

मौर्य काल में कृषि

अवनतलंद साम्राज्य (322-185 BCE) में वर्गीकृत मिट्टी और कृषि उपयोग के लिए मौसम संबंधी टिप्पणियों बना दिया। अन्य मौर्य सुविधा में बांधों का निर्माण और रखरखाव और घोड़े से तैयार रथों का प्रावधान शामिल था जो पारंपरिक बैलगाड़ियों की तुलना में तेज था। ग्रीक राजनयिक मेगस्थनीज (300BC) ने अपनी पुस्तक इंडिका में उस समय भारतीय कृषि का प्रत्यक्ष दर्शी विवरण प्रदान किया है। वह लिखते हैं, "भारत में कई विशाल पहाड़ हैं जो हर तरह के फल-वृक्षों में उगते हैं, और कई महान उर्वरता के विशाल मैदान हैं। मिट्टी का बड़ा हिस्सा सिंचाई

www.ignited.in

के अधीन है और फलस्वरूप वर्ष के दौरान दो फसलें होती हैं। अनाज के अलावा, पूरे भारत में बाजरा और चावल के विभिन्न प्रकार उगते हैं। चूंकि प्रत्येक वर्ष दो मानसून होते हैं, इसलिए प्रतिवर्ष दो कटाई में निवासी इकट्ठा होते हैं।

दक्षिण भारतीय कृषि

दक्षिण भारत का कृषि दृश्य प्राचीन भारत में समान रूप से उज्ज्वल था। दक्षिण लोग जैसे चावल, गन्ना, बाजरा, काली मिर्च, विभिन्न अनाज, नारियल, सेम, कपास, इमली और चंदन, कटहल, नारियल, खजूर, सुपारी और केला के पेड़ आदि व्यवस्थित रूप में फसलों की एक विस्तृत श्रृंखला की खेती की जुताई, खाद डालना, दक्षिण भारत में निरंतर कृषि के लिए निराई, सिंचाई और फसल सुरक्षा का अभ्यास किया गया। इस अवधि के दौरान जल भंडारण प्रणालियों को डिजाइन किया गया था। कल्लनई (पहली-2 एनडी शताब्दी ईस्वी), कावेरी नदी परबना एक बांध दुनिया की सबसे पुरानी जल-नियमन संरचनाओं में से एक माना जाता है जो अभी भी उपयोग में है।

चोल काल में भारतीय कृषि

चोल साम्राज्य (875-1279) के दौरान दक्षिण भारत में कृषि समाज ने प्रकट किया कि चोल शासन के दौरान भूमि की सामूहिक होल्डिंग ने धीरे-धीरे व्यक्तिगत भूखंडों को अपने स्वयं के सिंचाई प्रणाली के साथ रास्ता दिया। चोलों के पास नौकरशाह भी थे जो पानी के वितरण की निगरानी करते थे, विशेष रूप से टैंकर-एंड-चैनल नेटवर्क द्वारा पानी का वितरण ड्रियर क्षे त्रोंमें। खेती के व्यक्तिगत फैलाव के बढ़ने से शुष्क खेती के क्षेत्रों में कमी आई हो सकती है। पूर्व-ब्रिटिशकाल में भारतीय अर्थव्यवस्था में एक तरफ अलग-थलग और आत्मनिर्भर गाँव थे, और कस्बे, जो कि बड़े थे। प्रशासन, तीर्थ यात्रा, वाणिज्य और हस्तशिल्प, दूसरे पर। परिवहन और संचार के साधन अत्यधिक अविकसित थे और इसलिए बाजार का आकार बहुत छोटा था। पूर्व-ब्रिटिश भारत में कृषि प्रणाली को समझने के लिए, ग्राम समुदाय की संरचना और चरित्र, आंतरिक और विदेशी व्यापार के चरित्र, परिवहन और संचार के साधनों की स्थिति का अध्ययन करना आवश्यक है।

सल्तनत कालीन भू-राजस्व

सल्तनत काल में एक मुस्लिम शासक को जो कर वसूल करने का अधिकार बताया गया है और दिल्ली सुल्तानों की आय के प्रमुख स्त्रोंत थें वे इस प्रकार थे - 1 उश्र 2 खराज 3 खम्स 4 जजिया और 5 जकात। इनके अतिरिक्त खानों से आय भूमि में गडा हुआ धन निःसंतान लोगों की सम्पति, आयात निर्यात कर आदि भी इस काल में राज्य की आय के साधन थे।

उश्र - मुस्लिम किसानों से जो भुमिकर लिया जाता था वह उश्र कहलाता था। यह उपज के 1/10 की दर से वसूल किया जाता था।

खराज - गैर-मुसलमानों (हिन्दुओं) की भूमि पर जो भूमिकर लिया जाता था उसे खराज कहा जाता था। मुस्लिम कानून के अनुसार इसकी दर उपज के 1/10 से 1/2 तक होती थी।

खम्स - काफिरों के विरूद्ध युद्ध में लूट का जो माल मिलता था उसका 1/5 भाग सरकारी खजानें में जमा किया जाता था। इसे खम्स कहा जाता था। शेष 4/5 सैनिकों में बाँट दिया जाता था। अलाउद्दीन खिलजी नें इसका उल्टा कर दिया था।

जकात - जकात धार्मिक कर था जो केवल मुसलमानों से लिया जाता था। यह उसकी सम्पत्ति का 2.5 प्रतिशत वार्षिक की दर से लिया जाता था। यह कर कुछ निश्चित मुल्य से अधिक की सम्पत्ति पर लिया जाता था। सम्पत्तिका वह भाग जो जकात से मुक्त होता था, निसाब कहलाता था।

जजिया - जजिया मुस्लिम राज्य में गैर मुस्लमानों से लिया जाने वाला कर था। मुस्लिम कानून के अनुसार गैर मुस्लमानों का जिन्हें जिम्मी कहा जाता था, एक मुस्लिम राज्य में रहनें का अधिकार नहीं था। जजिया देने के पश्चात् ही उनको राज्य में रहनें का अधिकार प्राप्त होता था और इसके बदलें में राज्य द्वारा उनको उनके जीवन और सम्पत्ति की सुरक्षा की गारण्टी प्रदान की जाती थी।

मुगल कालीन भू-राजस्व

मुगल साम्राज्य की लगभग दो तिहाई आय भूमिकर से होती थी जो एक प्रकार से आर्थिक संगठन का मेरूदण्ड थी। अतः मुगल बादशाहों में सम्राट अकबर ने इस ओर विशेष मान दिया। 1560 ई. में बेरमखा के पतन के पश्चात् जब शासन की बागडोर अकबर ने अपने हाथों में ली तो उसे पता चला कि उसका शाही खजाना खाली है और राज्य का अधिकांश हिस्सा उसके अधिकारियों के कब्जें में है और सम्राट के हाथ में भूमि का थोंडा सा हिस्सा है। ई. ए. एल. श्रीवास्तव ने लिखा है कि एक बार अपने किसी अत्यन्त आवश्यक कार्य से जब अकबर को थोडे रूपयों की जरूरत पडी खजानें में 15 रू तक नही निकलें और इस कारण से मजबूर होकर अकबर ने तुरन्त ही आर्थिक व्यवस्था की ओर ध्यान दिया। अब उसने समस्त विभाग में विभिन्न अधिकारियों की नियुक्तियां करके और एक के बाद एक अनेक सुधार करके साम्राज्य की आर्थिक स्थिती को मजबूत किया और भू राजस्व व्यवस्था को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान किया। 1560 ई. में अब्दुल मजीद आसफ खाँ को अर्थमत्री नियुक्त किया और उसे भूमि व्यवस्था को संगठित करने का आदेश दिया परन्तु उसने कोई संतोषप्रद कार्य

नही कर पाया। 1564 ई. में मुजफ्फरखाँ को राज्य का दिवान अर्थमंत्री नियुक्त किया गया वह आसफखाँ के झुठे आकडों से बहुत परेशान हुआ। 1568 ई. में शिहाबुद्दीन अहमद खाँ को खालसा भूमि का दिवान नियुक्त किया गया। फिर 1570 ई. में मुजफ्फरखाँ को फिर विŸामंत्री नियुक्त किया गया उसने जब्ती हरसाला की व्यवस्था पुनः चालू किया। 1580 ई. में दहसाला बन्दोबस्त लागू किया और उसने लगान व्यवस्था को स्थायी स्वरूप दिया।

ब्रिटिश काल में कृषि प्रणाली

ब्रिटिश शासन को दो युगों में विभाजित किया जा सकता है, पहला ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन 1757 से 1858 तक, और दूसरा, 1858 से 1947 तक भारत में ब्रिटिश सरकार का शासन। ब्रिटिश शासन की स्थापना अपने आप में एक धीमी थी। और लंबी प्रक्रिया, सौ से अधिक वर्षों तक फैली हुई। 1757 में प्लासी की लड़ाई के साथ शुरू हुआ ब्रिटिश विजय के वल 1858 तक पूरा हो गया था। इस अवधि के दौरान इंग्लैंड उत्पादन की तकनीक में बदलाव की अवधि से गुजर रहा था जिसने विनिर्माण में क्रांति लादी। ब्रिटिशविजय ने नई भूमि राजस्व प्रणाली की शुरुआत से और आंशिक रूपसे कृषि के व्यावसायीकरण की प्रक्रिया से ग्राम समुदाय के विघटन को जन्म दिया। नई भूमि प्रणाली और वाणिज्यिक कृषि का मतलब भारतीय किसान का अनैतिक शोषण था और इसके परिणामस्वरूप देश लगातार अकाल से त्रस्त था। भारत को इस तरह विकसित करने में अंग्रेजों की दिलचस्पी नहीं थी। रेलवे के विकास या सिंचाई के प्रसार या शिक्षा के विस्तार या राजस्व बस्तियों के निर्माण के सभी एक परम लक्ष्य, यानी, के महत्वपूर्ण योगदान की India-6 एक से आर्थिक नाली की प्रक्रिया में तेजी लाने के साथ शुरू किए गए anglo-सैक्सन काल स्थानीय सरकार की संस्था है। इस अवधि के दौरान, अधिकांश आबादी छोटे गांवों में रहती थी agriculture और कृषि उनके प्रमुख व्यवसाय थे। प्रत्येक गाँव ने एक टाउनशिप बनाई और स्थानीय सरकारकी एक इकाई थी।

भूमि प्रणाली घट रही है

1793-1850 ब्रिटिश शासन के महत्वपूर्ण प्रभाव भारत में एक नई भूमि प्रणाली की वृद्धि है। ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन के शुरुआती समय में, कंपनी के निदेशक सबसे बड़े संभावित राजस्व को हासिल करने के लिए उत्सुक थे। इस नीति को किसानों द्वारा अत्यधिक यथार्थता के रूप में चिह्नित किया गया था, जो यह नहीं समझते थे कि इस प्रक्रिया में अंग्रेज सुनहरे अंडे देने वाले हंस को मार रहे थे। लेकिन भूमि राजस्व भारत में कंपनी प्रशासन के लिए वित्त का एक प्रमुख स्रो तथा, साथ ही इंग्लैंड में कंपनी के निदेशकों को भारत की जीत से हर साल बड़े रिटर्न के साथ संतुष्ट करना था। कृषि में स्थिरता लाने के लिए अंग्रेजों ने 1793 में भूमि बंदोबस्त की शुरुआत की।बंगाल और पड़ोसी इलाकों में "स्थायी बंदोबस्त" शुरू किया गया। निपटान ने निजी जमींदारों को राजस्व संग्राह कों का दर्जा दिया। इसने स्थायी राजस्व में भू-राजस्व तय किया। यह कहा जाता था जमींदारी व्यवस्था और जमींदार जमा करने के लिए आवश्यक था एक बेहतर स्थिति में भू-राजस्व। बाद में अंग्रेजों ने बस्ती को अन्य राज्यों में विस्तारित किया और वहां भी जमींदार बनाए लेकिन वे "अस्थायी बंदोबस्त settlement में बदल गए, जिसके तहत विभिन्न राज्यों में 25-40 साल की अवधि के बाद भू-राजस्व को फिर से हासिल किया जा सकता था। एक और पूरी तरह से अलग भूमि प्रणाली बंबई और मद्रास के बड़े हिस्सों के लिए विकसित की गई थी और बाद में उत्तर-पूर्वी और उत्तर-पश्चिमी भारत तक विस्तारित की गई थी। इस प्रणाली के अनुसार, रैयतवारी बस्ती कहा जाता है, भूमि के एक भूखंड को धारण करने वाले प्रत्येक किसान को भूमि स्वामी के रूप में मान्यता दी गई थी और भूमि राजस्व के वार्षिक भुगतान के लिए राज्य को सीधे जिम्मेदार बनाया गया था।

यह बताया जा सकता है कि दोनों ही मामलों में, तय की गई भूमि किराए में अत्यधिक थी और दोनों ही व्यवस्थाएं कस्टम और परंपरा के आधार पर जैविक ग्राम समुदाय के विनाश में सहायक थीं। डैनियल और ऐलिस थॉर्नर लिखते हैं: "जहाँ जमींदारी व्यवस्था ने गाँवों के जमींदारों को स्वामी बना दिया, प्रत्येक किसान और राज्य के बीच अलग-अलग व्यवस्था करके रैयतवारी प्रणाली को गाँव समुदायों के दिल से काट दिया।" जमींदारी प्रणाली की शुरुआत के माध्यम से, अंग्रेज उन लोगों का एक वर्ग बनाने में सक्षम थे, जिनके हित भारत में ब्रिटिश शासन से सीधे जुड़े थे। लेकिन प्रणाली ने अनुपस्थित जमींदारों के एक वर्ग को बनाने में मदद की, जो वास्तविक कृषि प्रगति की तुलना में उच्च भूमि किराए को निचोड़ ने में अधिक रुचि रखते थे। जनसंख्या के अत्यधिक दबाव के कारण जमीनदारों को जमींदारों को किराये दार-काश्तकारों से अतिरिक्त किराया और कई अन्य भुगतान करने में मदद मिली। भूमि प्रणाली में संपूर्ण परिवर्तन के परिणाम स्वरूप निर्वाह कृषि का उदय हुआ। यहां तक कि रैयतवारी-व्यवस्था ने अपना मूलस्वरूप खो दिया और उच्च राजस्व की कठोर, त्वरित और अकुशल मांगों ने किसान-काश्तकारों को अनुपस्थित जमींदारों या साहूकारों को जमीन बेचने के लिए मजबूर कर दिया। लॉर्डकार्नवालिस द्वारा शुरू की गई ब्रिटिश भूमिप्रणाली, इस प्रकार ग्रामीण भारत में अनुपस्थित जमींदारों और साहूकारों के हाथों में आर्थिक शक्ति

www.ignited.in

की एकाग्रता में मदद मिली। इससे कृषि और किसान प्रभावित हुए।

Commercialization कृषि (1850-1947)

भारतीय कृषि में एक और उल्लेखनीय परिवर्तन इसका व्यावसायीकरण था जो 1850 और 1947 के बीच फैला था। कृषि के व्यावसायीकरण का तात्पर्य पारिवारिक उपभोग के बजाय बिक्री के लिए फसलों के उत्पादन से है। राष्ट्र के आर्थिक इतिहास के प्रत्येक चरण में, कृषि उत्पादन का एक हिस्सा बाजार के लिए उत्पादित किया जाता है। फिर, विपणन योग्य अधिशेष की सामान्य बिक्री से वाणिज्यिक कृषि में क्या अंतर है? यह ब्रिटिश उद्योगों के दबाव में सोची समझी नीति थी। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य तक, इंग्लैंड में औद्योगिक क्रांति पूरी हो चुकी थी।ब्रिटिश उद्योगों के लिए कच्चे माल, विशेष रूप से कपास, जूट, गन्ना, मूंगफली की जबरदस्त मांग थी। बाजार मूल्य की अधिक कीमत की पेशकश करके, किसानों को खाद्य फसलों के लिए व्यावसायिक फसलों के विकल्प के लिए प्रेरित किया गया था क्योंकि पहले वाले बाद की तुलना में अधिक भुगतान कर रहे थे। नतीजतन, किसान औद्योगिक फसलों में स्थानांतरित हो गए और कुछ जिलों में, वाणिज्यिक कृषि के लिए आंदोलन इतना मजबूत हो गया कि किसानों ने अपनी घरेलू जरूरतों के लिए मंडियों से खाद्य सामग्री खरीदना शुरू कर दिया। इससे भोजन के उत्पादन में गिरावट आई और फलस्वरूप यह अवधि भारत के आर्थिक इतिहास में सबसे भयानक अकाल की घटना से चिह्नित है। वाणिज्यिक कृषि भी कुछ हद तक, राज्य द्वारा भू -राजस्व की बढ़ती मांगों और किसान से जमींदारों द्वारा अत्यधिक किराए के परिणामस्वरूप थी। 1850 के बाद भारत में रेलवे के विस्तृत नेटवर्क के विकास से औद्योगिक क्रांति के लिए आवश्यक वाणिज्यिक कृषि की प्रक्रिया तेज हो गई थी। रेलवे ने देश के आंतरिक हिस्सों को बंदरगाहों और बंदरगाहों, शहरी विपणन केंद्रों से जोड़ा और इस तरह भारतीय कृषि विश्व में उत्पादन करने लगी। बाजारों। पंजाब से बड़ी मात्रा में गेहूं, बंगाल से जूट और बंबई से कपास इंग्लैंड निर्यात के लिए डाला जाता है। वही रेलवे जो देश के विभिन्न हिस्सों से वाणिज्यिक फसलों को ले जाती है, भारत में विदेशी मशीन निर्मित बनाती है। इस प्रकार, देश के वाणिज्यिक और व्यापारिक केंद्रों के साथ देश की भीतरी भूमि को जोड़ ने वाले रेलवे और लिंक-रोड एक तरफ वाणिज्यिक कृषि को तीव्र करने और दूसरी ओर भारतीय हस्त शिल्प के साथ मशीन-निर्मित सामानों की प्रतिस्पर्धा को तेज करने में सहायक थे। इन कारकों ने भारतीय उद्योगों को बर्बाद कर दिया।

नई भूमि प्रणाली

अंग्रेजों ने भूस्वामियों की एक श्रेणी बनाई ताकि भूमि राजस्व के लिए जिम्मेदारी दी जा सके, लेकिन अंग्रेजों ने मुक्त बाजार तंत्र केलिए किराए निर्धारण की प्रक्रिया को छोड़ दिया। बढ़ती कृषि आबादी के लिए भूमि की बढ़ती मांग के कारण किराए में अत्यधिक वृद्धि हुई। इस प्रक्रिया में भूमि को आकर्षक पूंजीगत संपत्ति में बदल दिया गया। इस प्रकार, भूमि का अधिग्रहण करने के लिए धन उधार देने वाले वर्गों के बीच बहुत इच्छा थी। भूमि की कीमतों में वृद्धि ने भूमि के रूप में सुरक्षा के मूल्य को बढ़ाया जिसके खिलाफ किसान उधार ले सकते थे। इससे भारतीय किसानों के कृषि ऋण में अनिश्चितता के कारण बार-बार वृद्धि हुई। धन उधार देने वाले वर्गों द्वारा लगाए गए ब्याज की उच्च दर ने किसानों के लिए अपने ऋणों को चुकाना असंभव बना दिया। धीरे-धीरे भूमि पैसे देने वाले वर्गों के पास चली गई। धन उधारदाताओं द्वारा किसान के फैलाव को खेती करने वाले वर्गों के कंगालीकरण की प्रक्रिया में जोड़ा गया। इस प्रकार, नए भूमि संबंधों ने भूमि मालिकों के एक वर्ग और खेती करने वालों के वर्ग (चाहे वह किरायेदारी के आधार पर या दैनिक मजदूरी) के सृजन को मूर्त रूप दिया, खेती से स्वामित्व को अलग कर दिया। भूमि के स्वामी उच्च रैंकों को निकालने में रुचि रखते थे, जो खेती करने वालों के साथ एकपित्त छोड़ ते थे। भूमि पर निवेश तेजी से गिर गया क्योंकि खेती करने वालों को उपज का एक बड़ा हिस्सा जमींदारों को किराए के रूप में देना पड़ता था और धन उधारदाताओं को ब्याज देना पड़ता था। इसने भारतीय कृषि में एक अंतर्निर्मित अवसाद पैदा किया। इस प्रकार, नए कृषि संबंध विच्छेदित थे और इसलिए कृषि विकास की प्रक्रिया मंद हो गई।

आधुनिक भारत में कृषि प्रणाली

अन्य विकासशील देशों की तुलना में बीसवीं सदी में भारत की कृषि वृद्धि कम रही है। हालाँकि, इस अवधि में कृषि क्षेत्र में कुछ महत्वपूर्ण विकास हुए हैं। स्वतंत्रता की पूर्व संध्या पर, भारत को भोजन की कमी की गंभीर समस्या का सामना करना पड़ा। विभाजन ने खाद्यान्न उत्पादन को एक गंभीर झटका दिया। खाद्यान्नों को बाहर से आयात करना पड़ता था क्योंकि कृषि उत्पादन आबादी की न्यूनतम आवश्यकताओं के साथ पर्याप्त नहीं था। इसलिए, खाद्यान्न में आत्म निर्भरता प्राप्त करने के लिए कृषि विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई ताकि तिमिर लाख को खिलाया जा सके। जैसा कि आजादी के बाद पंडित जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि “बाकी सब कुछ इंतजार कर सकता है लेकिन कृषि नहीं”, और यह परिप्रेक्ष्य कई सार्वजनिक नीतियों और निवेश निर्णयों में परिलक्षित होता था, विशेष रूप से सिंचाई, उर्वरक, उत्पादन, भूमि सुधार और सामुदायिक विकास

के संबंध में। भारत में हरित क्रांति फसल उत्पादन के लिए बेहतर कृषि प्रौद्योगिकी के व्यवस्थित अनुप्रयोग का परिणाम थी। कृषि क्षेत्र में वास्तविक तकनीकी सफलता के बारे में संकर और उच्च उपज देने वाली किस्मों का परिचय। यह नवाचार एक महत्वपूर्ण मोड़ पर आया जब भारत 1965-66 और 1966-67 के क्रमिक सूखे के तहत अलग था।

जैव प्रौद्योगिकी और हरितक्रांति जैसी नई कृषि तकनीकों की शुरुआत उच्च उपज वाली किस्मों, कृषि के मशीनीकरण, सिंचित क्षेत्रों में उर्वरकों और कीटनाशकों के बड़े पैमाने पर उपयोग से की गई थी। हरित क्रांति ने स्पष्ट रूप से देश की कृषि अर्थव्यवस्था पर सकारात्मक प्रभाव डाला। नई कृषि प्रौद्योगिकी के माध्यम से कृषि समृद्धि को प्रेरित करने के लिए प्रदान की गई पहल और प्रोत्साहन ने रिकॉर्ड लाभ उत्पादन में काम किया। हालाँकि, Revolution हरितक्रांतिरकी शुरुआत, कृषि ने पर्यावरण और समाज को प्रभावित करने वाले कई बदलावों को झेला है। हरितक्रांति ने एक संकीर्ण और विदेशी आनुवंशिक आधार पर गेहूं चावल मोनोकल्चर को बढ़ावा देकर आनुवंशिक विविधता को कम कर दिया था। Revolution हरित क्रांति २ के प्रमुख निहितार्थ इस प्रकार हैं;

- खेती को शिफ्ट करना, वन भूमि को कृषि भूमि में बदलना, मोनो क्रॉपिंग और ओवर ग्रेजिंग
- हरितक्रांति और भ्ल्ट (उच्च उपज देने वाली किस्मों) के अनुकूलन के साथ कीटनाशकों के आवेदन में समय के साथ काफी वृद्धि हुई है।
- खाद्य श्रृंखला के माध्यम से, ये जहरीले रसायन पशुधन और मानव शरीर में प्रवेश करते हैं और विभिन्न स्वास्थ्य खतरों का कारण बनते हैं।
- चावल आधारित फसल प्रणाली के लिए बढ़ी हुई सिंचाई तटीय क्षेत्रों में जलजमाव की मौजूदा समस्या को और बढ़ा देती है।

1960 के दशक की हरित क्रांति ने अपने प्रारंभिक वर्षों में, कृषि योग्य भूमि की तहतक अधिक कृषि योग्य भूमि संसाधनों को लाया और अनाज की प्रति हेक्टेयर उत्पादकता को बढ़ाया। हरितक्रांति के लगातार अनुसरण और भारतीय कृषि में एक उपयुक्त तकनीकी सफलता की कमी के बाद, हरित क्रांति में भारतीय कृषि में कुलकारक उत्पादकता में लगातार गिरावट आई है। यदि भारत हरितक्रांति के केंद्र में नहीं है तो संरक्षण और कृषि के लिए पर्याप्त समर्थन के माध्यम से भारत को स्थिर खाद्य सुरक्षा व्यवस्था नहीं मिल पाएगी।

प्लांट इनोवेशन एंड प्रोटेक्शन का विकास

ऐतिहासिक रूप से पौधे के नवाचारों का विनियोजन पूरे जीवों के आधार पर पौधे की विविधता अधिकार प्रणाली के अनुसार उनकी प्रजनन क्षमता के संबंध में था। जैविक प्रणालियों के उप-सेलुलर घटकों के हेरफेर के लिए मानव आविष्कारशील गतिविधि और जैविक विवरण का विस्तार करने के लिए जैव-प्रौद्योगिकीय तरीकों के विकास ने पौधे के विनियोग के इस रूप को चुनौती दी। पादप जीवविज्ञान में हेरफेर करने का सटीक साधन हमारे तकनीकी ज्ञान का हिस्सा बन गया है। पेटेंट प्रणाली अपने आप में लगभग पांच सौ साल पहले वापस आने के लिए उत्तरदायी है। हालांकि, यह केवल हाल ही में किया गया है कि पश्चिमी दुनिया पेटेंट regime-10 के लिए एक "मौलिक" दृष्टिकोण लिया के रूप में एक परिणाम के पेटेंट जीन, प्रोटीन, जैविक प्रक्रियाओं के साथ-साथ किस्मों सहित पूरे जीवों के लिए प्रदान किया गया है। हालांकि विकासशील देशों के लिए प्राथमिकता "आविष्कार countries पर नहीं थी, लेकिन नए उद्योगों और" निवेशों के निर्माण में -11A पौधों की किस्मों को विषय-वस्तु अभी भी विकसित हो रहा है। विभिन्न प्रकार की सुरक्षा हासिल करने के लिए एक नई किस्म की मात्र खोज को हटा दिया गया है। प्लांट इनोवेशन के लिए बौद्धिक संपदा संरक्षण के इतिहास को प्लांट इनोवेशन के पारंपरिक प्रयासों –ट्रेडमार्क/अनुचित प्रतिस्पर्धा शासन के साथ-साथ पेटेंट शासनों के बाद क्रमिक बदलाव के साथ-साथ सुईजेनिस "प्लांट वैराइटी" रिजीम की ओर धीरे-धीरे बदलाव की विशेषता है। पूर्ववर्ती ट्रेडमार्क और पेटेंट प्रस्तावों के इस मोजेक के खिलाफ सुईजेनिस शासन का सबसे अच्छा विश्लेषण किया जा सकता है। प्लांट आनुवांशिक संसाधनों के स्वामित्व और नियंत्रण के मुद्दे 1992 में रियो में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण सम्मेलन में अंतरराष्ट्रीय संघर्ष का स्रोत थे, जहां जैव विविधता पर प्रस्तावित अंतरराष्ट्रीय संधि में बौद्धिक संपदा अधिकारों के प्रावधानों के अमेरिकी विरोध ने संयंत्र आनुवंशिक संसाधनों का कानूनी नियंत्रण लाया। दुनिया का ध्यान।

निष्कर्ष

अधिकांश विकासशील देशों की तरह भारत भी स्वदेशी आनुवंशिक संसाधनों से समृद्ध है। लेखक ने कहा कि, नई प्रणाली के अनुकूलन से कृषि प्रणाली में सुधार हुआ है, लेकिन कृषक समुदाय के अधिकारों की पर्याप्त मान्यता का अभाव है। अधिकांश ग्रामीण आबादी भूमि या संपत्ति, पानी, श्रम और बाजारों, शिक्षा, सूचना और नई प्रौद्योगिकियों तक पहुंच के अपने अधिकारों से वंचित हैं। परंपरागत पौधों की किस्में और जंगली प्रजातियां कृषि की नई तकनीकों और जैव प्रौद्योगिकी

www.ignited.in

जैसी तकनीकों के उपयोग के कारण अपरिवर्तनीय रूप से गायब हो रही हैं और इस प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप खेती का पता नहीं चला है।

संदर्भ

1. अजीस, आईजे, ई. सलीम (2004). प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग के संदर्भ में विकास प्रदर्शन और भविष्य के परिदृश्य। अद्यतन 2004 क्यू।

2. बैनदुर, एम (2009). गैर-स्थलीय के रूप में प्रकृति: भारतीय वेदिका और पुराणिक विचार में पवित्र प्राकृतिक परिदृश्य और स्थान। पर्यावरणीय दर्शन, 6 (2)।

3. बिमला, सीएल (1888). प्राचीन भारत का ऐतिहासिक भूगोल, सोसाइटी असियाटिक डी पेरिस फ्रांस।

4. अनाज, इंद्रकुमार, सीएल मैकडोनाल्ड (ऑनलाइन)। भूमि सूची से भूमि प्रबंधन तक। एक ऑपरेटिव जी.आई.एस. का विकास। कनाडा। (http://mapconteÛtcom/autocarto/proceedings/autocarto6/pdff/rom/land/inventory/to/land/management-pdf.) एक्सेस: 23.12.2011)

5. डी. ला. फॉसे, सीएफ (1918). भारत का इतिहास, संशोधित संस्करण। लंदनरू मैकमिलन एंड कंपनी लिमिटेड पर्यावरण इतिहास संसाधन (ऑनलाइन)। (http://www.eh-resources-org/timeline/Vkbeykbu_prehistory-html) एक्सेस: 16.12.2011)

6. भारत सरकार, योजना आयोग (2007). प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012) पर कार्य समूह की रिपोर्ट वॉल्यूम प्रू-संश्लेषण। भारत सरकार।

7. गोपाल भादरकर आर (1884)। का प्रारंभिक इतिहास Dekkan, नीचे करने के लिए यवन विजय। बॉम्बे गजेटियर।

8. जीयर, एस (1997)। भूमि उपयोग के लिए पारंपरिक रंग कोडिंग। अमेरिकन प्लानिंग एसोसिएशन। (http://www.gsd-harvard-edu/gis/manual/style/ColorConventions-pdf:) एक्सेस: 23.122011)।

9. केनरिक, पी. पीआर क्रेन (1997). भूमि पर पौधों की उत्पत्ति और प्रारंभिक विकास। प्रकृति, 389।

10. Kepner, डब्ल्यू जी, एम. Hernadez, डी.जे. Semmens, डीसी Goodric (2008)। पेसिफिक नॉर्थवेस्ट (यूएसए) में वाटरशेड कंडीशन पर फ्यूचर लैंडस्केप चेंज का आकलन करने के लिए परिदृश्य विश्लेषण का उपयोग। नीदरलैंडरू स्प्रिंगर प्रकाशक। आईएसबीएनरू 978-1-4020-6588-0।237-261

11. कुंडेल, जेई, एम मायजेवस्की, तेडीमेल (ऑनलाइन)। लैंड यूज प्लानिंग एंड पॉलिसी इश्यूज, चैप्टर 4. सेक्शन 1: ड्राइविंग ड्राइविंग में बदलाव। (http://www - interfacesouthorg/swui-assessment/ch4-pdf) एक्सेस किया गया: 27.12.2011)

12. शैक, एस, जीए हेल्मर्स, जे. ए. एटवुड (2005)। खेत का विकास कार्यक्रम और कृषि भूमि मूल्यों में उनके योगदान। अमेरिकी कृषि आर्थिक संघ, 87।

13. विश्व बैंक (2006)। स्थायी भूमि प्रबंधन, चुनौतियां, अवसर और व्यापार बंद। वाशिंगटन डी. सी.

14. ए. एल. श्रीवास्तव मध्यकालीन भारत

15. बी. एल. गुप्ता/पेमाराम मध्यकालीन भारत का इतिहास

Corresponding Author

Dr. Shriphal Meena*

Lecturer, Department of History, Govt. College Karauli, Rajasthan